लोकविद्या जन आन्दोलन पुस्तकमाला–2

बाजार मोड़ो
लोकविद्या बाजार बनाओ

विद्या आश्रम
सारनाथ, वाराणसी–221007

विषय प्रवेश

जाहिर है कि अगर जनता का कोई भी भला होना है तो वर्तमान बाजार में आमूलचूल परिवर्तन अनिवार्य है। इस बाजार का मुंह उल्टा किये बगैर यानि उसे जनता के हित में मोड़े बगैर गरीबी, भूखमरी और गैर–बराबरी से मुक्ति संभव नही है।

जनता के पक्ष में बाजार होने का मोटा अर्थ यह है कि लोकविद्या और श्रम को जायज मूल्य मिले। इसे लोकविद्या बाजार का नाम देना चाहिये। इसी से हर घर में खुशहाली आ सकती है।

लोकविद्या वह विद्या है जो समाज में फलती–फूलती है। किसान, कारीगर, आदिवासी, छोटे–छोटे दुकानदार और स्त्रियां ये सब लोकविद्या के स्वामी होते हैं। ये सब मिलकर जो समाज बनाते हैं उसे **लोकविद्याधर समाज** कहा जाता है। पशुपालन के जानकार, गांव–गांव और बस्तियों में फैले हुए जनस्वास्थ्य रक्षक और प्राकृतिक संसाधनों तथा सामुदायिक प्रबन्धन के जानकार सभी लोकविद्याधर समाज के ही अंग होते हैं। ये किसी कालेज या विश्वविद्यालय में अपना ज्ञान नही सीखते। ये अपने ज्ञान को समाज में ही सीखते हैं और समाज की जरूरतों, अपने अनुभव, प्रयोग व अपनी तर्कबुद्धि के बल पर इसे विकसित करते रहते हैं। लोकविद्या को बाजार में मूल्य नही मिलता इसीलिये हमारा समाज भयानक गरीबी और गैर बराबरी से ग्रस्त है।

लोकविद्याधर समाज की अधिकाधिक लूट के बल पर सरकार 7 और 8 प्रतिशत की दर से आर्थिक विकास का ढिंढोरा पीट रही है। वास्तविकता यह है कि केवल थोड़े से लोगों की आय बढ़ रही है और अधिकांश जनता गरीब ही होती चली जा रही है।

लोकविद्या बाजार बनाने का अर्थ होगा बेहद तेज और न्यायसंगत विकास जो गैर बराबरी और गरीबी से हमेशा के लिये मुक्ति दिला दे।

इस पुस्तिका में यह बताने का प्रयास किया गया है कि लोकविद्या बाजार को कैसे बनाया जा सकता है। भाग–1 में लोकविद्या दृष्टिकोण से वर्तमान बाजार की एक संक्षिप्त व्याख्या की गई है।

बाजार मोड़ो–लोकविद्या बाजार बनाओ

विषय सूची

भाग–1
वर्तमान बाजार

1. वर्तमान बाजार शोषण और लूट का प्रमुख स्थान है। 3
2. वर्तमान बाजार में लोकविद्या और श्रम तथा उन पर आधारित वस्तुएं और सेवायें सस्ते में बिकती हैं। 4
3. आज के बाजार में पूंजी और संगठित ज्ञान के आधार पर किया गया उत्पादन और सेवायें महंगी बिकती हैं। 5
4. मुक्त और खुले बाजार का विचार धोखाधड़ी का विचार है। 6
5. अंतर्राष्ट्रीय बाजार का विचार जन विरोधी विचार है। 7
6. इस बाजार ने अपसंस्कृति का बड़ा विस्तार किया है। 7
7. वर्तमान बाजार मनुष्य से उसका मनुष्यत्व छीनता है। 8

भाग–2
लोकविद्या बाजार

लोकविद्या बाजार की ओर बढ़ने का रास्ता 9

1. कृषि उत्पाद को दाम मिले। 10
2. उत्पादन की छोटी इकाइयों के लिये बाजार में आरक्षण हो। 12
3. वस्त्र और खाद्य के क्षेत्र स्त्रियों के लिये आरक्षित हों। 13
4. छोटे दुकानदारों के साथ बड़ी पूंजी की प्रतिस्पर्धा गैर–कानूनी हो। 14
5. आदिवासी क्षेत्रों में बड़ी कम्पनियों का प्रवेश वर्जित हो। 15
6. लोगों की क्रय शक्ति बढ़े इसके लिये मजदूरी की न्यूनतम दर वही हो जो सरकारी नौकरी के न्यूनतम वेतन में होती है। 16
7. स्थानीय मुद्रा को कानूनी मान्यता मिले। 17
8. बाजार आपसी लेन–देन और सुविधा का स्थान बने न कि मुनाफे का। 18
9. राष्ट्रीय संसाधनों का बाजारीकरण बंद हो। 19
10. शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्रों में मुनाफा गैर कानूनी घोषित हो। 20
11. मीडिया ज्ञानवर्धन, सृजन तथा मनोरंजन का स्थान बने, न कि बाजार को बढ़ावा व विस्तार देने का। 20

लोकविद्या जन आन्दोलन पुस्तकमाला–2

पुस्तिका : बाजार मोड़ो – लोकविद्या बाजार बनाओ, अक्टूबर 2011

सहयोग राशि : रु. 10/–

प्रकाशक :
विद्या आश्रम, सारनाथ, वाराणसी के लिये डा. चित्रा सहस्रबुद्धे, समन्वयक, विद्या आश्रम द्वारा प्रकाशित।

पता : विद्या आश्रम, सा 10/82ए, अशोक मार्ग, सारनाथ, वाराणसी–221007
फोन : 0542–2595120, 09839275124
ई–मेल : vidyaashram@gmail.com
वेब साइट : vidyaashram.org

ब्लाग :
- lokavidyajanandolan.blogspot.com
- lokavidyapanchayat.blogspot.com
- angadhmangadh.blogspot.com

मुद्रक : सत्तनाम प्रिंटिंग प्रेस, एस–1/208, के–1, नई बस्ती, पाण्डेयपुर, वाराणसी–221002

भाग–1

वर्तमान बाजार

वर्तमान बाजार शोषण और लूट का प्रमुख स्थान है

- वैश्वीकरण में बाजार का बड़ा विस्तार हुआ है। दूर–दराज के कोनों में, छोटे–छोटे गांवों, जंगलों और पहाड़ों में जो आर्थिक क्रियायें होती हैं उन सभी से मूल्य हड़पने के रास्ते यह बाजार बनाता है। सरकारें और पूंजीपति एक होकर इस बाजार को बना रहे हैं।

- मुक्त बाजार के नाम पर बड़ी पूंजी की ताकतें बाजार पर हावी हैं।

- गरीब लोगों के लिये बाजार में न खड़े होने की जगह है और न अपने मन से किसी भी वस्तु का दाम तय करने की मोहलत।

- हर खरीद–फरोख़्त में कमजोर पार्टी नुकसान उठाती है और मजबूत पक्ष फायदा उठाता है।

- उत्पादन की इकाइयां छोटी हो चली हैं। छोटी–छोटी पूंजी लगाकर और छोटी–छोटी जमीनों पर काम होता है तथा उत्पादन सस्ते से सस्ता बेचने की मजबूरी होती है।

- अब कारखानदारों और मजदूरों के बीच संघर्ष का स्थान किसानों, आदिवासियों, पटरी के दुकानदारों और कारीगरों के संघर्षों ने ले लिया है।

- हड़ताल के बारे में ख़बर अब कम आती है। बाजार बंद, रास्ता रोको, रेल रोको और धरने जैसी ख़बरें आती हैं। ये ही संघर्ष के नये तरीके हैं।

- लोकविद्या के शोषण और लूट का सबसे कारगर स्थान यह बाजार ही है।

वर्तमान बाजार में लोकविद्या और श्रम तथा उन पर आधारित वस्तुएं और सेवायें सस्ते में बिकती हैं

- कृषि उत्पादन सस्ता बिकता है। किसान आन्दोलन की सबसे बड़ी मांग यही रही है कि कृषि उत्पादन को जायज मूल्य मिले और 1967 का आधार वर्ष लेकर कृषि उत्पादन और औद्योगिक उत्पादन के दामों के बीच संतुलन स्थापित हो। इस बाजार में किसान की विद्या और श्रम दोनों का जबर्दस्त शोषण होता है।

- आदिवासियों को जंगलों से बेदखल करके व उनके गांवों और बस्तियों को उजाड़ कर उन्हें दुनिया के सबसे सस्ते मजदूरों में तब्दील कर दिया गया है। शायद नेपाल और बंगलादेश को छोड़कर श्रम का मूल्य इतना कम कहीं नही है जितना भारत में। जो आदिवासी जंगलों में रहते हैं वे या तो ठेकेदारों के काम करते हैं या फिर अन्य वनोत्पाद इकट्ठा करके बाजार में बेचते हैं। इन वस्तुओं को बाजार में जो मूल्य मिलता है या फिर ठेकेदार जो मजदूरी देता है वह और भी कम होता है।

- अपने ज्ञान और हुनर के बल पर काम करने वाला तीसरा बड़ा तबका कारीगरों का है। कपड़ा, चमड़ा, लोहा, लकड़ी, तरह–तरह के धातु, मिट्टी, कांच, पत्थर, प्लास्टिक इत्यादि सभी तरह के पदार्थों का काम जानने वाले कारीगर बाजार से तबाह हैं। जब वे अपने उत्पादन के लिये बाजार ढूंढते–ढूंढते हार जाते हैं तब किसी गद्दीदार, पूंजीपति, मालिक के लिये काम करने लगते हैं। मालिक अपनी पूंजी के बल पर बाजार हासिल करता है लेकिन कारीगर को उसकी विद्या का मूल्य नही के बराबर मिलता है। तरह–तरह की मरम्मत और रखरखाव के कार्यों और सेवाओं का बाजार बेहद कमजोर होता है। वैसा ही काम करने वाले सरकारी नौकरों की आय उनसे कई गुना अधिक होती है।

- छोटे–छोटे दुकानदार या पटरी पर गुमटी–ठेला लगाने वाले भी बाजार की बड़ी मार सहते हैं। ये छोटी पूंजी के होनहार मैनेजर होते हैं। मैनेजरी का दाम तो दूर, इन्हें दिन भर खड़े रहने का दाम भी नही मिलता। अब सरकार फुटकर धंधे में खुलकर बड़ी पूंजी को प्रवेश दे रही है। हजारों करोड़ वाली देसी और विदेशी कम्पनियां यह बाजार हड़पने की होड़ में हैं। वैसे तो पटरी पर धंधे वाले इनसे भी मुकाबला कर लें, लेकिन सरकारें पटरी के धंधे को शहरी व्यवस्थाओं के नाम पर उजाड़ रही हैं और फुटकर धंधे का बाजार बड़े–बड़े पूंजीपति निगमों को सौंप रही हैं।

- इस बाजार के विकास ने महिलाओं को शायद सबसे अधिक ठगा और लूटा है। जो काम वे अपनी रुचि से करती थीं वह उनसे छीन लिया गया है और सबसे कम श्रम मूल्य के सबसे अरुचिकर काम उनके हाथ आ गये हैं। अब या तो वे बाजार में खड़े होकर अशोभनीय काम करें या दूसरों के घरों में काम करें या अपने घर में सिलाई करने, कसीदा करने, बिन्दी चिपकाने, मसाला कूटने, पापड़ बेलने, अचार–मुरब्बे के लिये कटाई करने, मोती बनाने, माला बनाने, जैसे असंख्य काम करती रहें और दिन भर में मुश्किल से 20–25 रुपया कमा पायें।

आज के बाजार में पूंजी और संगठित ज्ञान के आधार पर किया गया उत्पादन और सेवायें महंगी बिकती हैं

- संगठित ज्ञान उसे कहते हैं जो कालेजों, विश्वविद्यालयों और बड़े–बड़े संस्थानों में अर्जित किया जाता है।

- शिक्षा बेहद महंगी हो चली है। निजी स्कूल और कालेज बनाने की होड़ मची हुई है।

- कालेजों, विश्वविद्यालयों और प्रशासनिक महकमों में मोटे वेतन दिये जाते हैं और साथ में तरह–तरह की सुविधायें। ये लोग साल भर में मुश्किल से 200 दिन काम करते हैं और काम के दिन केवल 4 या 5 घण्टें।

- शिक्षा के निजी क्षेत्रों में मालिक और प्रबंधक मोटी कमाई करते हैं तथा कार्यकर्ताओं को बहुत कम वेतन दिया जाता है। उदाहरण के लिये तमाम छोटे–छोटे निजी विद्यालयों में अध्यापकों को रोज 4–5 घंटे काम का केवल 800 रुपये के आसपास मिलता है।

- शिक्षा के बाजारीकरण ने बच्चों को पढ़ाने जैसे उच्च और भले कार्य को एक धंधे में तब्दील कर दिया है। विद्या और शिक्षा के कार्य जहां से ऊँची सोच और नैतिकता के मानक प्रवाहित होने चाहिये, वहां से अब मुनाफे और प्रतिस्पर्धा के मूल्य गढ़े जा रहे हैं।

- स्वास्थ्य सेवाओं का बाजार बेहद तेजी पर है। एक तरफ लोकविद्या स्वास्थ्य सेवाओं को गैर कानूनी करार दिया जा रहा है और दूसरी ओर डाक्टर और अस्पतालों की कमाई आसमान छू रही है। इससे स्वास्थ्य सेवाओं में नैतिकता का घोर पतन हुआ है।

- कम्पनियों द्वारा बनाया गया हर सामान महंगा बिकता है। कपड़ा, जूता, दवाइयां, होटल, ड़िब्बाबंद खाने का सामान, प्रसाधन सामग्री, तेल, मंजन, साबुन, इलेक्ट्रानिक का सामान, कम्प्यूटर, मोबाइल, इन सभी के दाम सामान्य लोगों की क्षमता से बाहर ही चलते हैं।

- कम्पनियों के नाम से बिकने वाला अधिकांश सामान छोटी–छोटी इकाइयों में बनता है। कम्पनियां वित्त, प्रबन्धन और बाजार का काम करती हैं और सारा मुनाफा उठा ले जाती हैं।

- इन्हीं कम्पनियों को सरकार भी सहायता करती है। उन्हें सस्ते में जगह उपलब्ध कराती है और मोटे कर्जों की व्यवस्था करती है। यहां तक कि उनके द्वारा की गई अनियमितताओं और धोखाधड़ी को अनदेखा करती है।

मुक्त और खुले बाजार का विचार धोखाधड़ी का विचार है

- मुक्त और खुले बाजार का विचार आज से 200 साल पहले यूरोप में औद्योगिक क्रांति के बाद अस्तित्व में आया। यह बाजार बराबरी की नहीं बल्कि बराबरी के मौके की बात करता है।

- इसके अन्तर्गत बने बाजार में मानवता और न्याय के विचार गौण हो गये और पूंजीपति तथा सामान्य लोगों को एक से मौके देने की व्यवस्था सिद्धांतत : मानी गई। इसके चलते पैसे की ताकत ने सबसे बड़ी ताकत बन गई।

- पैसे की ताकत पर लोक प्रतिनिधियों को खरीदना और सरकार की नीतियों को प्रभावित करना इस बाजार का शुरू से ही एक स्वीकृत मूल्य रहा।

- पेटेन्ट का विचार इस खुले बाजार के साथ ही अस्तित्व में आया। पेटेन्ट मुनाफे की सुरक्षा का एक कारगर कानूनी तरीका है। एक तरफ खुले बाजार की बात की गई और दूसरी ओर पूंजी और पूंजीपतियों की सुरक्षा की व्यवस्थायें बनाई गईं।

- इस बाजार में शुरू से ही पूंजी के बल पर विद्या और श्रम के शोषण और लूट को जायज माना गया।

- वैश्वीकरण के दौरान आज फिर खुलकर मुक्त और खुले बाजार की वकालत हो रही है। सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों ही स्तरों पर इसका मुकाबला जरूरी है।

अंतर्राष्ट्रीय बाजार का विचार जन विरोधी विचार है

- जिस बाजार में उत्पादन और खपत के बीच बड़ी दूरी होती है, उसमें जिसकी लाठी उसकी भैंस की कहावत लागू होती है। यह लाठी पूंजी की होती है और भैंस मुनाफे की।

- आम आदमी की जिन्दगी अपने आसपास के समाज और प्रकृति में बीतती है। जब अंतर्राष्ट्रीय बाजार उसके दरवाजे पहुंच जाता है तब अपनी जिन्दगी के नियंत्रण वह खो देता है।

- वास्तव में आज का बाजार मनुष्य द्वारा किये गये कार्यों के नतीजों और उसके अपने ज्ञान को उसी के खिलाफ इस्तेमाल किये जाने की व्यवस्था है। अंतर्राष्ट्रीय बाजार इसका पुख़्ता रूप है।

इस बाजार ने अपसंस्कृति का बड़ा विस्तार किया है

- बड़े बाजार का अर्थ ही है सामाजिक मूल्यों की अवहेलना की छूट।

- विज्ञापन, चमक–दमक और हंगामे के जरिये यह बाजार लोगों को अपनी क्षमता से बाहर अनाप–शनाप खर्च करने के लिये प्रेरित करता है।

- परिवार, गांव तथा समुदायों के टूटते जाने का एक बड़ा कारण मनुष्य की हर गतिविधि पर बाजार हावी होने में देखा जा सकता है।

- स्त्रियों को एक उपभोग की वस्तु के रूप में परोसना जैसे इस बाजार का केन्द्रीय अभियान होता है।

- पैसे की लोलुपता, तरह–तरह की वस्तुएं खरीदने का लालच और छिन्न–भिन्न होता सामाजिक नियंत्रण अपराध को बड़े पैमाने पर बढ़ावा देता है।

- आधुनिक दुनिया में व्यापार और अपराध की विभाजन रेखा बड़ी धूमिल है। अमर्यादित स्पर्धा अपराध का रूप ले इसमें अचरज की कोई बात नही है।

वर्तमान बाजार मनुष्य से उसका मनुष्यत्व छीनता है

- यह बाजार मनुष्य की इच्छाओं, जरूरतों और कल्पनाओं के संचालन पर कब्जा कर लेता है।

- जब कोई अपनी जरूरत या इच्छा के बारे में सोचता है, तो बाजार में खड़े व्यक्ति की जरूरतों या इच्छाओं को ही अपने दिमाग में आकार दे रहा होता है।

- चिंतन भी मनुष्य का अपना नहीं रह जाता।

- एक आदर्श मनुष्य अथवा समाज की कल्पना वह नही कर पाता है बल्कि केवल अनियंत्रित ताकतों के जाल में अपने या समाज को सुरक्षित करने तक ही सोच पाता है।

- उसका दर्शन और कला बाजार के गुलाम हो गये हैं।

- खुद से ही उसका रिश्ता टूट गया है। जब वह अपने अंदर झांक कर देखता है तो वास्तव में वहां किसी और को बैठा पाता है, एक ऐसे व्यक्ति को जिसका सब कुछ बाजार की ताकतों से जूझने में ही खप जाता है।

- इस बाजार को पूरी तरह बदले बगैर मनुष्य में उसके मनुष्यत्व की पुनर्स्थापना नही हो सकती।

●

भाग–2

लोकविद्या बाजार

लोकविद्या बाजार की ओर बढ़ने का रास्ता–

- कृषि उत्पाद को दाम मिले।
- उत्पादन की छोटी इकाइयों के लिये बाजार में आरक्षण हो।
- वस्त्र और खाद्य के क्षेत्र स्त्रियों के लिये आरक्षित हों।
- छोटे दुकानदारों के साथ बड़ी पूंजी की प्रतिस्पर्धा गैर–कानूनी हो।
- आदिवासी क्षेत्रों में बड़ी कम्पनियों का प्रवेश वर्जित हो।
- लोगों की क्रय शक्ति बढ़े इसके लिये मजदूरी की न्यूनतम दर वही हो जो सरकारी नौकरी के न्यूनतम वेतन में होती है।
- स्थानीय मुद्रा को कानूनी मान्यता मिले।
- बाजार आपसी लेन–देन और सुविधा का स्थान बने न कि मुनाफे का।
- राष्ट्रीय संसाधनों का बाजारीकरण बंद हो।
- शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्रों में मुनाफा गैर कानूनी घोषित हो।
- मीडिया ज्ञानवर्धन, सृजन तथा मनोरंजन का स्थान बने, न कि बाजार को बढ़ावा व विस्तार देने का।

कृषि उत्पाद को दाम मिले

- कृषि उत्पादन को सही दाम मिले बगैर गरीबी और गैर–बराबरी दूर होना संभव नहीं है।

- पिछले 40 वर्षों में कृषि का आधुनिकीकरण हुआ है। वह हर काम जो किसान के हाथ से निकल गया मुनाफे का बन गया। खाद, कीट नाशक, बीज, कृषि–यंत्र जैसे पानी का पम्प, ट्रैक्टर, हार्वेस्टर, थ्रेशर वगैरह का उत्पादन कम्पनियों द्वारा होने लगा और ये सब कम्पनियां मुनाफा कमाती हैं केवल वास्तव में खेती करने वाले किसान का अर्थशास्त्र घाटे का होता है।

- पिछले 40 वर्षों में सरकारी नौकरों, विद्यालयों और विश्वविद्यालय के अध्यापकों के वेतन लगभग 100 गुना बढ़े हैं, जबकि कृषि उत्पादन का दाम केवल 20 गुना बढ़ा है।

- सरकार अपनी नीति के द्वारा कृषि उत्पादन का दाम कम बना कर रखती है और यही आज के औद्योगिक विकास के लिये पूंजी निर्माण का प्रमुख तरीका है।

- कृषि उत्पादन के लिये सही दाम का रास्ता सभी के विकास का रास्ता है, एक ऐसे विकास का रास्ता है जिसमें बहुमत ग्रामीण जनता का

विकास शामिल है। सब जानते हैं कि जिस वर्ष खेती अच्छी होती है, किसान को कुछ ठीक–ठाक दाम मिलता है, उस वर्ष ग्रामीण बाजारों में गति होती है, छोटे दुकानदारों, कारीगरों, मजदूरों सभी की आमदनी में इजाफा होता है।

- शहर के बाजारों में अनाज, फल, सब्जी के दाम का किसान को मिलने वाले मूल्य से रिश्ता नहीं होता। सरकार द्वारा समर्थित इस बाजार का सिद्धांत यह है कि किसान का सामान कम से कम मूल्य में बिके और उपभोक्ता से अधिक से अधिक लिया जा सके।

- मजदूरों की जरूरतों के मुताबिक कृषि उपज के मूल्य कम रखने का तर्क झूठा है। अगर यह तर्क ठीक होता तो मकान, कपड़ा, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा, बिजली, मनोरंजन के साधन जैसी तमाम जरूरतें सस्ते में पूरी हो रही होतीं। लेकिन ऐसा एकदम नहीं है।

- वास्तव में किसान और मजदूर के हित एक समान हैं। दोनों ही बाजार की घोर असमानता के शिकार हैं। यह तो राज करने वालों की नीति और कूटनीति है कि तरह–तरह से किसानों और मजदूरों के हित एक–दूसरे के विपरीत बना कर सामने लाये जायें।

उत्पादन की छोटी इकाइयों के लिये बाजार में आरक्षण हो

- पारिवारिक श्रम और विद्या के बल पर चलने वाली घरेलू इकाइयों के लिये बाजार में आरक्षण होना चाहिये।

- रोजमर्रे की जरूरतों के तमाम सामान छोटी इकाइयों में बनते हैं। ये इकाइयां बाजार के अभाव में बंद होती जा रही हैं और अच्छे भले जानकार कारीगर परिवार भुखमरी में ढकेले जा रहे हैं।

- कपड़ा, खाद्य पदार्थ, लकड़ी, लोहे, कांच, प्लास्टिक का सामान, इलेक्ट्रानिक का सामान, सभी कुछ छोटी–छोटी इकाइयों में बनता हैं या बनाया जा सकता है। ये सब सामान बेहद सुंदर बनते हैं और स्वास्थ्य तथा पर्यावरण की दृष्टि से भी हानिकारक नहीं होते।

- इनके लिये बाजार में आरक्षण से शहरी और कस्बाई बस्तियों में एक नई रौनक आ जायेगी।

- लोकविद्या के आधार पर बनने वाले सामानों और सेवाओं के लिये बाजार में आरक्षण हो, इसके लिये सरकार पर दबाव लाने के लिये कारीगर संगठनों को बनाया जाना जरूरी है।

वस्त्र और खाद्य के क्षेत्र स्त्रियों के लिये आरक्षित हों

- बाजार के विस्तार ने स्त्रियों के हाथ से काम छीने हैं और उनकी ज़िन्दगी सीमित व असुरक्षित बना दी है।

- इस बाजार ने एक तरफ उन्हें सस्ते मजदूर में तब्दील कर दिया है और दूसरी तरफ उनकी विद्या, हुनर और कार्यक्षमता का बेतहाशा शोषण अस्तित्व में लाया है।

- बहुसंख्यक स्त्रियों की भूमिका परिवार संचालित करने, बच्चों को बड़ा करने, पारिवारिक उद्योग अथवा खेती के कामों में हाथ बंटाने और उनके प्रबन्धन में सहयोग करने की होती है।

- स्त्रियां लोकविद्या की बेजोड़ स्वामिनी होती हैं। वस्त्र और खाद्य के क्षेत्र में उनके ज्ञान और कौशल से सभी परिचित हैं। ये काम वे अपने पारिवारिक दायित्व के साथ बखूबी निभाती हैं।

- वस्त्र और खाद्य की स्थानीय जरूरतें पूरी करने की जिम्मेदारी वे निभा सकती हैं। इससे उन्हें अपनी विद्या एवं रुचि के अनुकूल काम मिलेगा, समाज में सम्मान का स्थान मिलेगा और घर की आमदनी में इजाफा होगा।

- इसलिये वस्त्र और खाद्य के क्षेत्र स्त्रियों के लिये आरक्षित होने चाहिये। इन क्षेत्रों में उन्हें बड़ी पूंजी वालों से और कम्पनियों से मुकाबला न करना पड़े, इसके लिये कानून बनने चाहिये।

छोटे दुकानदारों के साथ बड़ी पूंजी की प्रतिस्पर्धा गैर–कानूनी हो

- बड़ी पूंजी के साथ प्रतिस्पर्धा यह छोटे दुकानदारों की तबाही का पैगाम लाता है।
- फुटकर धंधे में बड़ी पूंजी की घुसपैठ में सरकार खुलकर बड़ी पूंजी का साथ दे रही है।
- पटरी के दुकानदारों को उजाड़ कर सरकार बड़े व्यापारियों को बाजार मुहैया कराती है।
- देश भर में पटरी के दुकानदार लम्बे समय से अपने उजाड़ के खिलाफ संघर्ष कर रहे हैं।
- राजनीति दलों में उनके प्रति सहानुभूति का अभाव है।
- ये दुकानदार छोटी पूंजी के दक्ष मैनेजर हैं। यह प्रबन्धन का ज्ञान व अभ्यास लोकविद्या का हिस्सा होता है।
- देश के करोड़ों पटरी के छोटे–छोटे दुकानदारों का भविष्य इसी में है कि एक **लोकविद्या राजनीति** का उदय हो जो लोकविद्या बाजार की कल्पना साकार करे।

आदिवासी क्षेत्रों में बड़ी कम्पनियों का प्रवेश वर्जित हो

- जिस तरह आदिवासियों की जमीन गैर आदिवासी नही खरीद सकते, उसी तरह से आदिवासियों का जीवन तितर–बितर न हो इसके लिये जरूरी है कि आदिवासी क्षेत्रों में बड़ी कम्पनियों का प्रवेश वर्जित हो।

- यह प्रवेश कम्पनियों के उत्पाद के बाजार के लिये होता है। तरह–तरह के उपकरणों और अन्य रोजमर्रे की उपभोक्ता वस्तुओं में यह देखा जा सकता है। इससे आदिवासी और गैर–आदिवासी दोनों ही खरीददार पुराने सामानों से दूर हट जाते हैं और सभी गरीब लोगों की जेब पर बोझ बढ़ जाता है। इसके अलावा आदिवासियों की अपने ज्ञान पर आधारित अर्थ व्यवस्था तहस–नहस हो जाती है।

- प्राकृतिक संसाधनों पर कब्जे के लिये भी कम्पनियां आदिवासी क्षेत्रों में प्रवेश करती हैं। यह छत्तीसगढ़ और झारखण्ड में बड़े पैमाने पर हो रहा है, जिससे वहां का आदिवासी समाज पूरी तरह उखड़ जा रहा है। प्राकृतिक संसाधनों जैसे जल, जंगल, जमीन का बाजारीकरण सर्वथा गलत है और इसका नतीजा आदिवासियों की जिन्दगी तबाह करके उन्हें सस्ते से सस्ता मजदूर बनाने में होता है।

लोगों की क्रय शक्ति बढ़े
इसके लिये मजदूरी की न्यूनतम दर वही हो जो सरकारी नौकरी के न्यूनतम वेतन में होती है

- अधिकांश लोगों की आमदनी न्यूनतम सरकारी वेतन से बहुत कम है।
- न्यूनतम सरकारी वेतन आज लगभग रु. 12,000/– प्रति माह होता है तथा अन्य सुविधायें अलग से।
- बाजार के मूल्य इसी तरह संचालित होते हैं कि छोटा सरकारी नौकर किसी तरह गुजर–बसर कर ले।
- यानि करोड़ों की संख्या में वे लोग हैं जो जिन्दा रहने भर तक की ज़रूरतें भी बड़ी कठिनाई से पूरी कर पाते हैं। वे अपने परिवार के लिये भोजन, वस्त्र, शिक्षा, मनोरंजन, स्वास्थ्य, स्त्रियों को सम्मान कुछ भी ठीक से नही जुटा पाते।
- जरूरी यह है कि हर कोई कम से कम इतना कमा सके जितना सरकारी विभाग का न्यूनतम वेतन होता है।
- यह करना बहुत आसान है। जिसे जो आता है उसके बल पर उसे नौकरी दी जाये। ध्यान रहे, सभी को कुछ न कुछ करना आता है। इसे **लोकविद्या रोजगार नीति** कहते हैं।

स्थानीय मुद्रा को कानूनी मान्यता मिले

- स्थानीय मुद्रा का अर्थ है विनिमय के लिये स्थानीय स्तर पर एक अलग मुद्रा का इस्तेमाल। यह बहुधा कागज की ही बना ली जाती है और इसे स्थानीय बाजारों में मान्यता होती है।

- स्थानीय मुद्रा के प्रयोग दुनिया भर में जगह–जगह होते रहते हैं। यह पाया गया है कि जहां भी ये प्रयोग होते हैं वहां रोजगार की स्थिति में सुधार होता है, ज्यादा से ज्यादा लोगों को काम मिलता है और वस्तुओं के दाम नियंत्रण में रहते हैं।

- इससे स्थानीय आर्थिक गतिविधियों में इजाफा होता है, पूंजी का पलायन रुकता है और स्थानीय समाज समृद्ध होते हैं।

- सामान्यतः स्थानीय मुद्रा को कानूनी मान्यता प्राप्त नहीं होती है और इसका प्रभाव बढ़ने के साथ राष्ट्रीय सरकारें इसे गैर कानूनी करार देकर पुलिस प्रशासन के बल पर बंद करा देती हैं।

- स्थानीय मुद्रा के प्रयोग जनहित के प्रयोग हैं और बड़े बाजार की मुनाफाखोरी और लूट से मुकाबला करने के कारगर तरीके हैं।

- स्थानीय बाजार व स्थानीय मुद्रा अभियान लोकविद्याधर समाज के अपनी मुक्ति के अभियान हैं।

बाजार आपसी लेन–देन और सुविधा का स्थान बने न कि मुनाफे का

- आज बाजार के क्षेत्र में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय बाजार से मूल्य व मानक तय होते हैं। जरूरत इसकी है कि ये मूल्य व मानक स्थानीय बाजार से तय हों।

- जबकि अंतर्राष्ट्रीय बाजार में केवल मुनाफे की ही कसौटी होती है, स्थानीय बाजार में सुविधा का भी ध्यान रखा जाता है।

- स्थानीय स्तर पर बहुत सा लेन–देन सीधे वस्तुओं को ले–दे कर होता है, जिसमें सुविधा और जरूरत का ही तत्व होता है, मुनाफे का नहीं।

- यह सुविधा और जरूरत का तत्व ग्रामीण बाजारों और बस्तियों के बाजारों में भी होता है। वास्तव में छोटी दुकानदारी की सामाजिक भूमिका ही यह है। यह कोई मुनाफे का कारोबार नही होता। ये दुकानदार अपने श्रम और प्रबन्धन क्षमता के बल पर समाज की सुविधा और जरूरत की पूर्ति करते हैं और अपनी जीविका चलाते हैं।

- इस तरह अगर स्थानीय बाजार और आपसी लेन–देन मजबूत किया जाय तो मुनाफे पर शिकंजा कसने का मूल्य लोकप्रिय होगा और शोषण व लूट के बाजार को बांधा जा सकेगा।

राष्ट्रीय संसाधनों का बाजारीकरण बंद हो

- बिजली, स्वास्थ्य, शिक्षा और वित्त ऐसे जीवनावश्यक संसाधन हैं जो राष्ट्रीय संसाधन हैं। ये सभी को मानवता और न्याय के आधार पर उपलब्ध होने चाहिये। बाजार के नियमों से इन्हें संचालित करना सर्वथा गलत है।

- इन सभी क्षेत्रों में केवल लघु प्रयास ही निजी हो सकते हैं। यदि बड़े उद्योग बनने ही हैं तो वे सार्वजनिक क्षेत्र में होने चाहिये। बड़ी बिजली की कम्पनियां, बड़े अस्पताल, विश्वविद्यालय और बैंक व बीमा कम्पनियां ये सब सरकारी ही होने चाहिये और इनके लाभ सभी को बराबर मिलने चाहिये।

- राष्ट्रीय संसाधनों का बाजार में दाम लगे और पैसे वाले लोग उन्हें खरीद ले जायें, इस व्यवस्था को सिरे से नकार देना जरूरी है।

- यानि सबको बराबर बिजली मिलनी चाहिये, सबको एक जैसी स्वास्थ्य सुविधायें मिलनी चाहिये, सबको एक जैसी शिक्षा मिलनी चाहिये और पूंजीपति हो या किसान या कारीगर, सभी के लिये कर्ज की बराबरी की व्यवस्थायें होनी चाहिये।

शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्रों में मुनाफा गैर कानूनी घोषित हो

- शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्रों में मुनाफा कमाना वर्जित होना चाहिये।
- इनमें कमाई की सीमा तय होनी चाहिये। उदाहरण के लिये शिक्षक, कालेज के मालिक, डाक्टर, अस्पताल के मालिक की प्रति माह की कमाई सरकारी अफसर की तनख्वाह से अधिक नहीं होनी चाहिये।

मीडिया ज्ञानवर्धन, सृजन तथा मनोरंजन का स्थान बने, न कि बाजार को बढ़ावा व विस्तार देने का

- आज मीडिया का बड़ा विस्तार हुआ है। अखबार, रेडियो, टी.वी., सिनेमा, इंटरनेट, मोबाइल, सभी कुछ मीडिया में आता है।
- मुक्त और खुले बाजार मीडिया को बाजार के विस्तार और अप संस्कृति को बढ़ावा देने का स्थान बनाते हैं।
- ऐसी सरकारी नीति और नियंत्रण की जरूरत है कि मीडिया मुख्य रूप से सृजन, ज्ञानवर्धन और स्वस्थ मनोरंजन का स्थान बने।

आवाहन

लोकविद्या जन आन्दोलन यह आवाहन करता है

कि

लोकविद्याधर समाजों के बाजार से सम्बन्धित संघर्षों का व्यापक समर्थन किया जाय

और

लोकविद्या आधारित उत्पादन और सेवाओं के आपसी विनिमय में वृद्धि के प्रयासों का व्यापक समर्थन किया जाय

ये लोकविद्या बाजार बनाने की ओर बढ़ने के दो पाये हैं।

लोकविद्या बाजार एक बराबरी के समाज और नये मानव के निर्माण का रास्ता बनाता है

बाजार मोड़ने का काम जीवन पद्धति बदलने का काम है। रहन–सहन के तरीके, मनोरंजन के रूप, एक–दूसरे को देखने की नज़र, सब कुछ बदल जायेगा। लोकविद्याधर समाज का यह आन्दोलन एक ज्ञान आन्दोलन है। इसमें लोकविद्याधर समाज के सामाजिक कार्यकर्ताओं, विशेषज्ञों, कलाकारों, साहित्यकारों, जनसंचार कर्मियों व सम्पर्ककर्ताओं को आगे बढ़ कर काम करना है। यह ज़रूरी है कि वे लोकविद्या की श्रेष्ठता पर अपनी समझ पक्की करें और बाजार को मोड़ने व लोकविद्या बाजार बनाने का आन्दोलन तेज करें।